ISSN 0973-8541, HUMANITIES AND DEVELOPMENT, VOL.18, NO.2, JULY-DEC,2023 /117

''सा संस्कृति : प्रथमा–विश्ववारा''

डॉ0 रमेश प्रताप सिंह♣
असि० प्रो०–प्राचीन इतिहास विभाग
का० सु0 साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अयोध्या।
https://doi.org/10.61410/had.v18i2.162

सारांश

भारतीय संस्कृति वैश्विक धरा पर एक ऐसी संस्कृति का नेतृत्व करती है, जो मानवता की रक्षा के लिए प्राणियों को मनुष्य बनाने की क्षमता रखती है। एक ऐसा उच्च स्तरीय विचार जिससे व्यक्ति स्वयं के भीतर संतोष एवं हर्ष की अनुभूति को अंतःमन के भीतर अनुभव करते हुए सम्पूर्ण जीवन का निर्वहन कर सके। भारतीय संस्कृति इस धरा के तत्व ज्ञान में रची बसी है। एक ऐसा आदर्शवाद जो सामूहिक जीवन में विश्वास, सेवा, स्नेह, आत्मीयता, भावना, सहिष्णुता एवं सामाजिक न्याय का परिदृश्य उत्पन्न करना है। यही आदर्श भारतीय संस्कृति के शिक्षण की मूलधारा के रुप में भारतीय अंतःमन में प्रवाहित हो रही है।

शब्द संकेतः–संस्कृति, शोभन परिधान, विश्ववारा, अविच्छन्न, सहस्त्रयोजन, श्रद्धेय, अंगीकार, सार्वभौमिकता, उदात्त, पार्थक्य।

भारतीय संस्कृति पर चर्चा के पूर्व 'संस्कृति' शब्द पर विचार करना यथोचित होगा। शब्द का व्यवहार पारिभाषिक अर्थ में अंग्रेजी के कल्चर (culture) शब्द के अभिप्राय से किया जाता है। कल्चर (Culture) मूल लैटिन शब्द 'कल्चरा' (Cultura) से सम्बन्धित है इसी कल्चरा (Cultura) शब्द का समय के साथ–साथ भाषा रूपांतरण होकर कोलियर (Colere) शब्द बना, जिसका आशय मानस के विकास एवं उत्पादन के परिष्कार से है। यही 'कोलियर' (Colere) बाद में 'कल्चर' (Culture) बना प्रतीत होता है।

निःसंदेह इसके अध्ययन का आधुनिक दृष्टिकोंण और विचारधारा बहुत कुछ पश्चिमी ढंग पर विकसित हुई है। वास्तव में 'संस्कृति' शब्द की मूलभूत निरुक्त कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। भारतीय परिप्रेक्ष्य में संस्कृति शब्द 'संस्कृत' भाषा की 'कृ' धातु में 'सम्' उपसर्ग एवं 'क्तिन्' प्रत्यय से मिलकर बना है जिसका अर्थ– संस्कृयते अनेन इति संस्कृति :। अर्थात् सम्यक् ढंग से किया गया कार्य ही 'संस्कृति' है। विद्वानों का एक वर्ग संस्कृति शब्द के लिए–अर्थ के द्योतक 'ल्यप्' प्रत्यय के योग से निष्पन्न मानता है।

यदि इसे स्वीकार कर लिया जाय तो संस्कृति का अभिप्राय किञ्चित परिवर्तन के साथ परिष्कार या परिमार्जन की प्रक्रिया से ग्रहण किया जा सकता है। मानसिक एवं बौद्धिक उन्नयन के बावजूद जन–सामान्य संस्कृति और सभ्यता का उपयोग धातु अर्थ से भिन्न एक ही अर्थ में करता है, परन्तु शब्दों के धातुत्व अर्थ में पर्याप्त असमानता है। संस्कृति आभ्यान्तरिक तत्त्व है जबकि सभ्यता वाह्य मेरे कहने का आशय है कि कोई व्यक्ति सुसंस्कृत है या नहीं, इसका ज्ञान उसके आचार–विचार के आधार पर ही हो सकता है। परन्तु कोई व्यक्ति शोभन परिधानों को धारण करके प्रथम दृष्ट्या स्वयं को सभ्य प्रदर्शित कर सकता है। इस प्रकार संस्कृति शब्द का आशय–किसी वस्तु के सँजाने, सँवारने एवं परिमार्जित या परिष्कार करने से ग्रहणीय है।

'संस्कृति' शब्द का अपने उक्त विशिष्ट अर्थ में प्राचीनतम् व्यवहार 'यजुर्वेद' में मिलता है, वहाँ तत्कालीन युग से पूर्व की सांस्कृतिक परम्परा के लिए यह कथन सन्धिमिति है – 'सा संस्कृति : प्रथमा–विश्ववारा[1]। यहाँ न केवल संस्कृति विश्ववारा अर्थात विश्व का उन्नयन करने वाली थी। अपितु यदि उसे इस प्रकार कहा जाए तो उचित होगा कि यजुर्वेद के इस ऋषि ने संस्कृति की उपर्युक्त रूप

में परिभाषा दी है। इस प्रकार संस्कृति का दृष्टिकोण अति प्राचीन परम्परात्मक अध्ययन का घोतक है, जिसके अन्तर्गत हम अपनी अच्छी–बुरी प्रवृत्तियों एवं शक्तियों के रचनात्मक पक्ष का मूल्यांकन देश–काल में परिवर्तन के बाद भी करते आ रहे हैं।

भारतीय समाज की अतीत से मिली भौतिक एवं अभौतिक विरासत का नाम 'भारतीय संस्कृति' है। 'संस्कृति'– विचार, आचारण शैली के वे नियम और मूल्य हैं जिन्हें कोई समाज अपने अतीत से प्राप्त करता है। भारतीय संस्कृति की इस संदर्भ में अपनी कतिपय विशेषताएँ हैं जिनके कारण यह विश्व के अन्य देशों में भी उत्कृष्टता का पात्र बनी हुई है। 'भारतीय संस्कृति' विश्व के अन्य देशों में अपनी महत्ता को जिन–जिन विशिष्ट तत्त्वों के कारण स्थापित रखा है, उसी प्रसंग में उचित ही कहा गया है

''यूनान, मिस्र, रोमा, मिट गये सब जहाँ से।
लेकिन अभी है बाकी, नामोनिशाँ हमारा [1] ।।''

भारत एक विशाल देश है, जहाँ प्राकृतिक एवं सामाजिक स्तर की अनेक विषमताएँ दृष्टिगोचर होती हैं। भारतीय समाज तथाकथित जातियों के अनेक समूह एवं वर्गों में विभक्त है, जो अपने प्रतिष्ठा अनुरूप पारस्परिक सामाजिक आचार–विचार, रहन–सहन एवं व्यवहार में भी पृथक् है। इस तरह भारतीय संस्कृति में विविधताओं का समावेश है जो भौतिक, प्राकृतिक, सामाजिक, धार्मिक, भाषागत और नृ–तात्त्विक आदि अनेक प्रकार की है। प्राकृतिक एवं भाषा की विविधता के संदर्भ में एक विश्रुत 'भारतीय– जुमला' यहाँ पर कहना चाहूँगा कि

''कोस–कोस पे बदले पानी।
चार कोस पे बानी [1] ।।''

यद्यपि भारतीय संस्कृति में प्राकृतिक, सामाजिक, धार्मिक स्तर की तथाकथित विभिन्नताओं के अंश मौजूद हैं तथापि इन सबके बावजूद इनके मध्य एकता की अविच्छन्न कड़ी भी जुड़ी हुई है, जिसकी उपेक्षा हम किसी भी दशा में नहीं कर सकते। हर्बर्ट–रिजले के शब्दों में – "Beneath the manifold diversity of physical and Social type, language, custom and religion, which strikes the observers in India, these can still be discerned a certain under lying uniformity of life from the Himalayas to the cape-comorin- There is, in fact, an Indian Character. a general Indian personality which will can not resolve into component element."

प्रकृति ने भारत को विशिष्ट भौगोलिक इकाई प्रदान की है। भारतवासियों ने प्रारम्भ से ही उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में समुद्रतट के विशाल भू–खण्ड को अपनी मातृ–भूमि भारतवर्ष एवं उसकी संतानों को भारतीय माना है। यथा– विष्णु पुराण में वर्णित है–

उत्तर वत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चौव दक्षिणम्।
वर्ष तद् भारतं नाम भारती यत्र संतितः।।[1]

अथर्ववेद में देश को 'मातृभूमि' का पद दिया गया है, जो विश्व में ऐसी सर्व प्राचीन कल्पना है–

''माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः[1] ''

अर्थात यह भूमि माता है मैं उसका पुत्र हूँ। भौगोलिक एकता के साथ ही हमें राजनीतिक एकता कौटिल्य के अर्थशास्त्र के. इस वाक्य में दृष्टव्य है कि– *''तस्यां हिमवत् समुद्रान्तरम् उदाचीन योजन, सहस्त्र परिमान अतिर्यक् चक्रवन्ति क्षेत्रम्''* अर्थात हिमालय से लेकर समुद्रतट तक विस्तृत सहस्त्रयोजन भूमि को चक्रवर्ती सम्राट का क्षेत्र कहा जाता है।

भारतीय उपमहाद्वीप में इनके अतिरिक्त धर्म, भाषा, साहित्य एवं सामाजिक, परम्पराओं की एकता भी यहाँ ध्यातव्य है–

गंगा च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती।
नर्मदे सिन्ध कावेरी जलेऽस्मिन सन्निधिं कुरु[1] *।।*
अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची अवन्तिका।
पूरी द्वारावती चौन सप्तैता मोक्ष दायिकाः[1] *।।*

इसके अतिरिक्त मुख्यतः सांस्कृतिक एकता भारत को सूत्र में आबद्ध किये हुए है, क्योंकि आज भी एकता के उत्तर भारतवासियों के लिए सुदूर दक्षिण के तीर्थ उतने ही श्रद्धेय हैं जितने कि दक्षिण के निवासी उत्तरी तीर्थों को मानते हैं। भारत के विभिन्न भागों में एकता स्थापित करने के उद्देश्य से ही महान दार्शनिक आदि शंकराचार्य ने चारों दिशाओं में चार मठों. बद्रीनाथ, श्रृंगेरी, पुरी एवं द्वारका की स्थापना किया। सांस्कृतिक एकता के संदर्भ में एक और बिन्दु ध्यातव्य है वह हैं– भारत के दो महाकाव्य – रामायण एवं महाभारत का समस्त भारत वासियों द्वारा विभिन्न–भाषाओं के गायन, वादन, मंचन एवं चलचित्रों के माध्यम से अंगीकार एवं आत्मसात् करना। अयोध्या के राम का रामत्व सभी भारतवासियों के आदर्श रहा है चाहे वह उत्तर–भारतीय हो या दक्षिण–भारतीय। भारत–भूमि के संदर्भ में ब्रहम पुराण में कहा गया है कि–

गायन्ति देवा किल–गीतकानि, धनास्तु ते भारत भूमि–भागे।
स्वर्गापवर्गास्पद हेतु भूते, भवन्ति भूयः पुरुषाः मनुष्याः[1] *।।*

यही बात कमोबेश सल्तनत कालीन कवि 'अमीरखुसरो ने भी यहाँ के संदर्भ में कही है– जो सम्प्रति लाल किले 'दीवान–ए–खास' की दीवार पर अंकित है[1]।

ऽगर फिरदौस बर रूये जमीं अस्त।
यीं अस्त, यीं अस्त, यीं अस्त।।

भारतीय परम्परा में जननी एवं जन्मभूमि को स्वर्ग से भी बढ़कर बताया गया है–

''जननी जन्म–भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी[1] *।''*

भाषा के संदर्भ में भारत में कई भाषाएँ हैं, परन्तु सभी भारतीय भाषाओं की जननी संस्कृत भाषा है, इसमें लिखित साहित्य प्राचीन भारतीय अवस्त ज्ञान का विपुल भण्डार हैं। वस्तुतः संस्कृत भाषा – भारतीय संस्कृति की वाहिका है। वेद, उपनिषद्, रामायण, महाभारत एवं लौकिक साहित्य भी विश्व शान्ति एकता के साधन रहे है। अपनी संस्कृति धार्मिक विषयों में भी विश्व–सहिष्णुता का उपदेश देती है, इस संदर्भ में ऋग्वेद का विश्रुत वाक्य कहना चाहूँगा–

''एक सद् विप्राः बहुधा वदन्ति[1] *।*

जैन दर्शन का 'स्याद्वाद' या 'सप्तभंगीनय सिद्धान्त' विश्व धार्मिक सहिष्णुता का ही परिचायक है। धर्म–संस्कृति की सर्वांगीणता देखनी हो तो वैशेषिक–दर्शन के इन वाक्यों को ध्यान देना होगा –

यतोऽभ्युदय निःश्रेयस् सिद्धिः स धर्मः[1] *।*

अर्थात् धर्म वह है जिससे लौकिक एवं पारलौकिक दोनों सुखों की प्राप्ति हो।

अपनी भारतीय संस्कृति में सार्वभौमिकता मिलती है। इसमें अपनी उन्नति के साथ ही समस्त विश्व–कल्याण की कामना की गयी है। वैदिक काल से ही भारतीयों ने विपुल–विश्व को एकाकार मानते हुए 'वसुधैव–कुटुम्बकम्' एवं 'विश्व–बन्धुत्व' के साथ ही सह–अस्तित्व' जैसे उदात्त सिद्धांतों का प्रतिपादन करते हुए कहा है कि

अयं निजः परोवेति गणना लघुचेत साम।
उदार चरितानाम् तु वसुधैव कुटुम्बकम्[1] *।।*

हमारी अपनी ही संस्कृति है जो अपने और पराये का भेद न करते हुए लोक–कल्याण की भावना को व्यक्त करती है।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित दुखभाग भवेत्[1] ।।

यह हमारी ही संस्कृति है जो न केवल मानव जाति अपितु प्राणि मात्र के कल्याण हेतु ईश्वर से प्रार्थना की कि विपुल–विश्व को असत (असत्य) से सत् (सत्य), तमस (अंधकार) से ज्योति (प्रकाश) एवं मृत्यु से अमृतम् (अमरता) की ओर अग्रसर करें –

असतो मा सद्गमय,
तमसो मा ज्योतिर्गमय
मृत्योर्माऽमृतं गमय[2] ।।

इस प्रकार भारतीय संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में यह कथन विचारणीय है कि–भौगोलिक दृष्टि से प्रकृति रमणी ने एक तरफ उत्तुंग–श्रेणियों एवं तीन दिशाओं से अगाध जलराशि द्वारा संरक्षित कर, भारत को एक अद्भुत कृति का रूप प्रदान किया है। भारतीय सांस्कृतिक विरासत के द्वारा ही भारत वासियों ने प्रकृति प्रदत्त पार्थक्य की उपेक्षा करके सुदूर देशों से प्रगाढ सांस्कृतिक एवं व्यापारिक सम्पर्क स्थापित कर 'बृहत्तर–भारत' की स्थापना की है। संभवतः ऋग्वेद का यह संदर्भ इनका आदर्श रहा होगा–

कृण्वन्तो विश्वं आर्यं[3] ।

अर्थात् आओ विश्व को श्रेष्ठ बनाये। यह भारतीय संस्कृति द्वारा ही संभव है।

सन्दर्भ सूची

1. Cambridge English Dictionary
2. Cambridge English Dictionary
3. यजुर्वेद 7/14
4. अल्लाम मुहममद इकबाल–तराना–ए–हिन्दी
5. *सारे जहाँ से अच्छा ..... से उद्धृत*
6. भारतीय संस्कृति में मातृ भाषा की महत्ता को समझाने के लिए कही गयी कहावत।
7. श्री विष्णु पुराण, अध्याय तीन, श्लोक 1, सं 2067, गीता प्रेस, गोरखपुर
8. अथर्ववेद, पृथ्वी सूक्त–12/1/12
9. यह श्लोक मैने प्रार्थना प्रीति नामक एक छोटी सी पुस्तिका से एंव गीता प्रेस (जनवरी 2010) गोरखपुर जीवनचर्या–अंक में प्रकाशित।
10. सहाय, शिवस्वरुप : (2008) *''प्राचीन भारतीय धर्म एवं दर्शन'* प्रकाशक मोतीलाल बनारसी दास पृ0 151
11. ब्रहम पुराण अध्याय 19 के श्लोक 25
12. शोध पत्र लेखक को नई दिल्ली के लाल किले में इसे देखने का सौभाग्य प्राप्त है।
13. वाल्मीकी रामायण–6–124–17 (सम्प्रति नेपाल का राष्ट्रीय ध्येय वाक्य भी है)
14. ऋग्वेद–1/164/46
15. वैशेषिक सूत्र 1/1/2
16. महोपनिषद्, अध्याय–6–मंत्र–71
17. पटेल डॉ0 ललितकुमार (2016) *''वेदेषु इष्टानिष्टसिद्धान्तः तत्समसामयिकता च'* पुनती संस्कृत जनरल प्रकाशक डी0वी0 प्रिटंर्स दिल्ली।
18. बृहदारण्यक उपनिषद् 1.3.28.
19. ऋग्वेद 9.63.5 (सम्प्रति आर्य समाज का ध्येय वाक्य भी है)